IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, March 2024

श्रीमदभगवद गीता के नैतिक दर्शन की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उपयोगिता

डॉ. विनीता नायर
सहायक आचार्य, दर्शनशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
viniphilos@gmail.com

सारांश

इस शोध पत्र का उद्देश्य श्रीमदभगवद गीता के नैतिक दर्शन को उजागर कर राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इसकी उपयोगिता को स्पष्ट करना है। भगवदगीता एक ऐसा ग्रंथ है जिसमें ना केवल तत्वमीमांसीय प्रश्नों का उत्तर प्राप्त होता है अपितु कर्तव्य से सम्बन्धित नैतिक जिज्ञासा भी शान्त होती है। जो व्यक्ति जिस भाव से भगवदगीता का अध्ययन करता है उसी भाव से सत्य उसके समक्ष प्रकट होता है। किशोरावस्था के विद्यार्थी जीवन में अपरिपक्व मन अनेक प्रश्नों में उलझा हुआ रहता है, इस समय गीता में दिए हुए स्वधर्म, विहित कर्म, अनासक्त भाव से कर्म कैसे किया जाए, कर्मों का चयन किस प्रकार करें इत्यादि प्रश्न उसके मानस में उभरने लगते हैं। इस समय अर्जुन द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में श्री कृष्ण का ज्ञान अति उपयोगी सिद्ध होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर बनाई गई है। इसका एक उद्देश्य विद्यार्थियों में अपनी भाषा एवं ग्रंथों के प्रति गौरव का भाव जगाना भी है। यदि गीता में से प्रकृत जीते जागते वे तथ्य ढूंढ कर विद्यार्थियों के समक्ष रख पाएं जिनसे संसार को समझने में उन्हें सहायता मिले तो यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्देश्य को पूरा करने में सहायक होगा।

संकेताक्षर : गीता का नीति शास्त्र, विहित कर्म, अनासक्त भाव, राष्ट्रीय शिक्षा नीति।

परिचय

श्रीमद्भगवद गीता अत्यन्त ही लोकप्रिय ग्रन्थ है जिसमें अध्यात्म, धर्म और आचार के गूढ प्रारूपों पर सूक्ष्म परन्तु हृदयग्राही एवं मर्म स्पर्शीभाषा का प्रयोग करते हुए धर्म के स्वरूप का स्पष्ट वर्णन किया गया है। चारों वेदों का सार उपनिषद है और उपनिषदों का भी सार श्रीमदभगवद गीता है। गीता में केवल उपनिषदों को ही नहीं दोहराया गया है बल्कि उनसे नई बात भी कही गई है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, March 2024

गीता में उपनिषदों के विभिन्न तत्वों का भली प्रकार समन्वय करके अध्ययनकर्ता को सभी पक्ष भली प्रकार से समझाया गए हैं।

उपनिषदों में ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों मार्गों का वर्णन होने पर भी ज्ञान पर ही अधिक बल दिया गया है। गीता उपनिषदों से अधिक व्यवहारिक और समन्वयवादी है। उसमें कर्म और भक्ति पर भी प्रकाश डाला है। शंकर के अनुसार गीता का मुख्य उद्देश्य ज्ञान है। शास्त्रों में ज्ञान की अत्यन्त महिमा का वर्णन किया गया है। श्री कृष्ण ने गीता में कहा है ‘‘न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते‘‘ (गीता 4/32), महात्मा तुलसीदास ने भी ज्ञान को मोक्ष का साधन माना है। ‘‘ज्ञान मोच्छप्रद वेद बखाना‘‘ (रामचरित मानस 3/15/9)। किन्तु इसमें प्रत्येक व्यक्ति का प्रवेश संभव नहीं है, क्योंकि प्रपन्चोन्मुख चित्तवृति की धारा को परब्रह्म की ओर मोड़ना कोई सरल कार्य नहीं है। ऐसी स्थिति में गोस्वामी तुलसीदास ने भक्ति या उपासना को अधिक सरस, व्यावहारिक, प्रिय तथा सर्वजन सुलभ बताया है और आत्म प्रसाधन के लिए इसी को जीव का परम धर्म स्वीकार किया है। कर्मयोग के समर्थकों के अनुसार लौकिक और वैदिक कर्म करता हुआ जीव मुक्ति प्राप्त कर सकता है। बाल गंगाधर तिलक के अनुसार मूल गीता निवृत्ति-प्रधान नहीं है, अपितु कर्म प्रधान है गीता में योग शब्द ‘कर्म योग‘ के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है।[1]

परन्तु भक्ति योग के अनुसार कर्म साधना में सर्वत्र अहम् के द्वारा ही संकल्प पूर्वक कर्म करने का विधान है, जो व्यक्ति में ‘अंहवृत्ति‘ को उद्वेलित और पोषित कर जीव को ‘लोह-श्रृंखला‘ या ‘स्वर्ण-श्रृंखला‘ से जकड़ने का ही जाल प्रतीत होता है।[2]

गीता कर्म करने का उपदेश तो देती है परन्तु उसका कर्म सामान्य ना होकर निष्काम कर्म है। निष्काम कर्म से तात्पर्य कर्म को प्रमुख और फल को गौण मानने से है। फल तो परिस्थितियों के कारण बाधित भी हो सकता है। यदि मनुष्य फल को ध्यान में रखकर कर्म करता है तो वह कर्म को गौण व फल को प्रमुख मानता है अर्थात् यदि इच्छित फल का हेतु अन्याय में है तो वह वैसा कर्म करने को तत्पर हो सकता है अतः गीता में उचित कर्म को बिना फल की आकांक्षा के चुनने का आग्रह है। भक्ति योग के अनुसार निष्काम का अर्थ कामना रहित अथवा तटस्थ ना होकर ईश्वर की इच्छा के अनुसार कर्म करना है अथवा अपने सभी कर्मों को, ईश्वर के चरणों में समर्पित कर देना है। ईश्वर की इच्छानुसार कर्म ईश्वर से तादात्म्य की स्थिति में ही हो सकता है।

आधुनिक युग में गीता चिंतन दार्शनिक एवं धार्मिक सम्प्रदायों तक सीमित नहीं रहा। अद्वैत, द्वैत और विशिष्टाद्वैत के मण्डन और पुष्टि की चिन्ता को छोड़कर बहिर्मुखी दृष्टि का विकास हुआ। आत्मा, परमात्मा और मोक्ष का सम्बन्ध राष्ट्र के जातीय जीवन से किया गया। व्यक्ति, समाज और

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, March 2024

राष्ट्र चिंतन के विषय बने तथा इनके परिप्रेक्ष्य में गीता की व्याख्या होने लगी। इस परम्परा में विवेकादानन्द, अरविन्द, तिलक, गांधी, विनोबा इत्यादि महापुरुषों का उल्लेखनीय योगदान है, इस वस्तुपरक दृष्टि का आधार वेदान्त ही है।

वैचारिक (दार्शनिक) परिवर्तन का आधार सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियां होती हैं। लेकिन जब विचार का आचार (यथार्थ) से सम्बन्ध टूट जाता है तब वैचारिक क्षेत्र में पिष्ट-पेषण और चर्चित-चवर्णम् प्रारम्भ हो जाता है। सदियों से आत्मा-परमात्मा, निर्गुण-सगुण, स्वर्ग-नर्क इत्यादि अवधारणाओं पर मंथन चल रहा है लेकिन ब्रह्मानुभूति या भविष्य में मोक्ष की कल्पना से संसार की जटिल समस्याओं का समाधान प्राप्त नहीं हो पाता है वास्तविक स्थिति से निपटने के लिए जिस विचार या आचार से सहायता मिलती है उसी को आदर्श माना जाना चाहिए। तात्पर्य यह है कि मनुष्य को जीवन दर्शन चाहिए जो कि उनके नित्य जीवन की समस्याओं का निदान कर सके। वेद, उपनिषद् एवं गीता जीवन-दर्शन के ग्रन्थ हैं। उपनिषद् एवं गीता को ‘प्रस्थान-त्रयी‘ में रखकर उसके आधार पर अद्वैत, द्वैत, विशिष्टाद्वैत या शुद्धाद्वैत का मंडन करना आचार्यों का अनुसंधान है।[3]

श्रीमदभगवद गीता में नैतिक दर्शन

भगवद्गीता ब्रह्म विद्या का ग्रंथ है और ब्रह्म विद्या से संबंधित किसी भी ग्रन्थ को समझने के लिए भारतीय दर्शन का ज्ञान भी आवश्यक है। गीता का विभिन्न मनीषियों ने जो अपनी-अपनी दृष्टि से भाष्य लिखे हैं उन्हें साधारण व्यक्ति के लिए समझना कठिन हो सकता है। चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य जैसे विचारक ने भी यह अनुभव किया कि भारतीय युवा ‘‘समय व मानसिक तैयारी के अभाव में मूल गीता का अध्ययन महान भाष्यों के साथ नहीं कर सकते।‘‘ लेकिन उन्होंने इस कठिनाई का निदान अपनी पुस्तिका ‘भगवदगीता‘ में किया है।[4]

गीता ‘ब्रह्म विद्या‘ ही नहीं अपितु नीतिशास्त्र भी है। गीता के अनुसार ‘‘योगः कर्मसु कौशलम्‘‘ योग कर्म को करने की कुशलता है। गीता के योग का अर्थ पतंजलि का योग नहीं है। यहां योग का अर्थ कर्म से है गीता का उपदेश ही अर्जुन के इस कथन से आरम्भ होता है कि वह धर्मसम्मूढ है और जानना चाहता है कि उसे क्या करना चाहिए और गीता के प्रवचन की परिणति अर्जुन के इस स्वीकार्य से होती है कि उसका संभ्रम दूर हो गया है। अर्थात् गीता कर्तव्य - अकर्तव्य का उपदेश देती है, इस प्रकार गीता ब्रह्मविद्या ही नहीं नीतिशास्त्र भी है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, March 2024

गीता के आरम्भ में ही अर्जुन श्रीकृष्ण से कहते हैं -

''कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।

यच्छ्ेयः स्यानिश्चितं बृहित्मने शिष्यस्तेऽहंशाधि मां त्वां प्रपन्नम्।।(2ः7)

मेरा सम्पूर्ण अपनापन (भावुकतापूर्ण) दया की दुर्बलता से ग्रस्त हो उठा है। अपने कर्तव्य के विषय में मेरा चित्त मूढ हो गया है, इसलिए मैं तुमसे पूछता हूँ। मुझे निश्चित रूप से बताओ कि मेरे लिए क्या भला है मैं तुम्हारा शिष्य हूँ। मैं तुम्हारी शरण में आया हूं; उपदेश दो।।[5]

भारतीय चिन्तन का जैसा अप्रतिम स्वरूप गीता में विलोपित है, वैसा कहीं अन्यत्र नहीं है। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी कहते हैं ''गीता हिन्दू दर्शन और नीतिशास्त्र के सबसे प्रमाणित ग्रन्थों में है और सभी समुदाय के हिन्दुओं ने इसे इसी रूप में स्वीकार किया है।''

जनमानस में भारतीय संस्कृति के मूल्यों को स्पष्ट करने वाले जो ग्रन्थ हैं उनमें दक्षिण में कम्बन कृत उत्तर में तुलसीदास कृत रामायण प्रमुख हैं। अन्यत्र अन्य रामकथाएं भी प्रचलित है। इसके अतिरिक्त स्मृति एवं पुराण ग्रन्थ भी हैं लेकिन इनमें भारत की संस्कृति की तात्विक विचारणा इतनी अच्छी तरह उभर कर नहीं आती है जैसी गीता में। नीति सम्बन्धी अनेक उलझनों का उत्तर इन ग्रन्थों में है; परन्तु नीति का जो दार्शनिक आधार है, वह गीता में ही है।[6]

लोकमान्य तिलक ने अद्वैतवादी श्रीकृष्णानन्द स्वामी को उद्धृत किया है कि ''गीता वह नीति शास्त्र अथवा कर्तव्य धर्मशास्त्र है जो कि ब्रह्मविद्या से सिद्ध होता है।'' तिलक ने उल्लेख किया है कि यही बात डायसन ने भी अपने ''उपनिषदों का तत्व ज्ञान'' नामक ग्रंथ में कही है। गीता में उपदिष्ट नीति शास्त्र को समझने के लिए गीता में ब्रह्मविद्या का जो विवेचन है उसको भी समझना आवश्यक है। लोकमान्य तिलक यह भी कहते हैं ''हमारा यह कहना नहीं है कि गीता में वेदान्त, भक्ति और पातञ्जल योग का उपदेश बिल्कुल दिया ही नहीं गया है परन्तु इन तीनों विषयों का (ज्ञान-कर्म समुच्चय सहित) गीता में जो मिश्रण किया गया है वह केवल ऐसा ही होना चाहिए जिससे परस्पर विरूद्ध धर्मों के संकट में पड़े हुए ''यह करें कि वह'' कहने वाले कर्तव्य-मूढ अर्जुन को अपने कर्तव्य के विषय में कोई निष्पाप मार्ग मिल जाए।''[7]

महर्षि अरविन्द ने भी कहा है कि ''गीता का सन्देश केवल दार्शनिक अथवा विद्वचर्चा का विषय नहीं है, अपितु आचार-विचारों के क्षेत्र में भी वह सदैव जीता-जागता प्रतीत होता है।''महात्मा गांधी ने लिखा है कि ''जब उन्हें जीवितावस्था के मोह तथा कसौटी के समय अचूक मार्ग दर्शन के लिए ऐसे शास्त्रीय ग्रंथ की आवश्यकता प्रतीत हुई थी तो वह ग्रंथ गीता मिला।''[8]

सामान्य व्यक्ति जो ब्रह्म विद्या अथवा दर्शनशास्त्र की गहराईयों में डूबना नहीं चाहता लेकिन जिसके पास अर्जुन के प्रश्न जैसा ही प्रश्न है कि वह क्या करे? कौनसा मार्ग चुने? उसके लिए गीता अत्यधिक प्रासंगिक है। गीता में तत्व दर्शन से अलग जो प्रकृत जीते-जागते तथ्य हैं उन्हें गीता से लिया जाना चाहिए, जो संसार का मार्गदर्शन कर सहायता पहुंचा सकें। भाषा स्वाभाविक एवं सरल होनी चाहिए जो वर्तमान मानव जाति की मनोवृत्ति के अनुकूल हो और जिससे उसकी पारमार्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायता मिले।

‘‘अर्जुन ‘कार्पण्यद्रोषोपहत-स्वभाव‘ के कारण ‘धर्म-संमूढचेता‘ हो जाता है। उसका विचार ही नहीं, अपितु उसका हृदय, उसकी प्राणगत वासनाएं उसकी सम्पूर्ण चेतना अपहृत हो जाती है और धर्म का उसे कहीं पता नहीं चलता। इसीलिए वह शिष्य होकर श्रीकृष्ण की शरण में आते हैं और प्रार्थना करते हैं कि मुझे वह वस्तु दीजिए जिसको मैंने खो दिया है, एक सच्चा धर्म दीजिए, धर्म का एक स्पष्ट विधान बता दीजिए, एक मार्ग दिखा दीजिए जिसके सहारे मैं फिर निश्चय के साथ चल सकूं।‘‘ यहां स्पष्ट है कि अर्जुन धर्म अर्थात् अपने कर्तव्य के सम्बन्ध में जानना चाहता है।[9]

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा ‘‘अपने स्वभाव से निर्धारित अपने स्वधर्म से विहित कर्म, अनासक्त भाव से लोकसंग्रह हेतु करें।‘‘ इस प्रकार कर्म करने की योग्यता, अभ्यास एवं ऐसे वैयक्तिक गुणों का विकास करने से प्राप्त होगी जोकि भारतीय संस्कृति के स्वीकृत मूल्य हैं। इन गुणों को यदि एक शब्द से परिभाषित करें तो वह शब्द ‘संयम‘ है।

यदि नैतिक उलझनों में फंसा हुआ व्यक्ति गीता के अध्ययन के उपरान्त अर्जुन के समान ऐसा कह सके कि ‘‘मेरे सारे संदेह समाप्त हो गए हैं और मैं स्थिर हो गया हूं‘‘, तभी वह विजय, कल्याण एवं नीति का अधिकारी हो सकेगा। ‘गीता का नीति शास्त्र‘ इसी भावना से रचित प्रयास है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उपयोगिता

शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुंच प्रदान करना, वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत् प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्चस्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है, जिसके द्वारा देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास एवं संवर्द्धन, व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सकेगा। अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा। इन

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
IJARSCT
Impact Factor: 7.53
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Volume 4, Issue 2, March 2024

युवाओं को उच्चतर गुणवत्ता पूर्ण शैक्षणिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा।

रोजगार एवं वैश्विक परिस्थितियों में तीव्र गति से आ रहे परिवर्तनों के कारण आवश्यक हो गया है कि विद्यार्थियों को जो कुछ सिखाया जा रहा है उसे तो वे सीखें ही, साथ ही सतत् सीखते रहने की कला भी सीखें। इसीलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस बात पर अधिक बल दिया गया है कि विद्यार्थी समस्या-समाधान और तार्किक एवं रचनात्मक रूप से विचार करना सीखें, विविध विषयों के बीच अंतर्सम्बंधों को देख पायें और नई जानकारी को नए और बदलती परिस्थितियों या क्षेत्रों में उपयोग में ला पायें। नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति विद्यार्थी केन्द्रित है, जो कि जिज्ञासा, खोज, अनुभव पर आधारित है। जिससे विद्यार्थियों में समग्रता एवं समन्वित रूप से देखने समझने की क्षमताएं विकसित होंगी। शिक्षा विद्यार्थियों के जीवन के सभी पक्षों एवं क्षमताओं का संतुलित विकास करे इसके लिए पाठ्यक्रम में विज्ञान एवं गणित के अतिरिक्त बुनियादी कला, शिल्प, मानविकी, खेल, भाषा, साहित्य, संस्कृति और मूल्यों का समावेश किया गया है। विद्यार्थियों में नैतिकता, तार्किकता, करुणा और संवेदनशीलता विकसित हो इसका प्रयास किया गया है।[10]

यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इक्कीसवीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है जिसका उद्देश्य हमारे देश के सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। यह नीति भारत की परम्परा एवं सांस्कृतिक मूल्यों के आधार को बरकरार रखते हुए इक्कीसवीं सदी की शिक्षा के लिए आकांक्षात्मक लक्ष्यों, जिनमें (एसडीजी 4 शामिल है) के संयोजन में शिक्षा व्यवस्था, उसके नियमन सहित सभी पक्षों के सुधार एवं पुनर्गठन का प्रस्ताव रखती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर विशेष बल देती है।[11]

प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परम्परा के आलोक में इस नीति का निर्माण किया गया है। ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय विचार, परम्परा और दर्शन में सदैव सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य स्वीकार किया जाता था। प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य पूर्ण आत्म ज्ञान और मुक्ति के रूप में माना गया था। तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला एवं वल्लभी जैसे प्राचीन भारत के विश्वस्तरीय विश्वविद्यालयों ने अध्ययन के विविध क्षेत्रों में शिक्षा और शोध के ऊंचे प्रतिमान स्थापित किए थे और विभिन्न पृष्ठभूमि तथा देशों से आने वाले विद्यार्थियों एवं विद्वानों को लाभान्वित किया था। इसी शिक्षा व्यवस्था ने चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, चाणक्य, चक्रपाणी, पाणिनी, पतंजलि, नागार्जुन, पींगला, मैत्रेयी, गार्गी, थिरुवल्लुवर जैसे अनेकों विद्वानों को जन्म दिया। इन विद्वानों ने वैश्विक स्तर पर विविध क्षेत्रों में प्रामाणिक रूप से मौलिक

योगदान किए। भारतीय संस्कृति और दर्शन का विश्व में बड़ा प्रभाव रहा है। वैश्विक महत्व की इस समृद्ध विरासत को आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखने की कोशिश भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में की गई है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनेक बिन्दुओं में से दो प्रमुख बिन्दु निम्नवत हैं -

1. रचनात्मकता और तर्क बुद्धि को विकसित करने पर बल।
2. नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्यों जैसे सहानुभूति, दूसरों के लिए सम्मान, स्वच्छता, शिष्टाचार, लोकतान्त्रिक भावना, सेवा की भावना, सार्वजनिक सम्पत्ति के लिए सम्मान, स्वतंत्रता का अर्थ समझना, उत्तरदायित्व बोध, समानता एवं न्याय का बोध जागृत करना इत्यादि है।[12]

श्रीमदभगवद गीता का नैतिक दर्शन यहीं उपयोगी है। गीता में स्वधर्म, लोक संग्रह, कर्तव्य बोध, निष्काम कर्म एवं निष्काम सेवा, न्याय, उत्तरदायित्व, तर्क क्षमता को बढ़ाने और पूर्वधारणाओं तथा कुरीतियों से मुक्त होकर अपने धर्म (कर्तव्य) को पहचानने की शिक्षा दी गई है।

अर्जुन उन सभी विद्यार्थियों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो अनेक शंकाओं से ग्रस्त हैं अथवा विषाद की अवस्था से गुजर रहे हैं। गीता के वे अध्याय जो कर्तव्य, धर्म और नैतिकता से सम्बन्धित हैं उन्हें सरल भाषा में पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास हो सके। जिस प्रकार अनेक महापुरुषों की जीवनियों और जीवन प्रसंगों को पाठ्यक्रम में इसीलिए स्थान दिया गया है जिनसे प्रेरणा लेकर विद्यार्थी जीवन की कठिन परिस्थितियों का सामना कर सके। उसी प्रकार भगवदगीता में श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए जिससे कर्तव्य से संबंधित नैतिक अन्तर्द्वन्द में फंसे विद्यार्थियों का मार्ग प्रशस्त हो सके।

जीवन-दर्शन में जगत और जीवन यथार्थ है। जगत से ही जीवन और उसके कर्मक्षेत्र का विकास होता है और इस कर्मविकास में जीवन अपनी पूर्णता खोजता है। जीवन की सार्थकता कर्म में है। यही गीता का कथन है और यही नवीन शिक्षा नीति का उद्देश्य भी है। प्रत्येक व्यक्ति जीवन में अपने कर्तव्यों को पहचाने तथा उत्तरदायित्वों का निर्वहन करते हुए समाज एवं राष्ट्र के विकास में पूर्ण योगदान करें।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर बनाई गई है, जिसका एक उद्देश्य विद्यार्थियों में अपनी संस्कृति एवं ग्रंथों (थातियों) के प्रति गौरव का भाव जगाना भी है। यदि गीता में प्रवृत्त नैतिक उपदेशों को विद्यार्थियों के समक्ष रखा जाए तो संसार को

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, March 2024

समझने में उन्हें सहायता मिलेगी, जिससे सकारात्मक परिणाम प्राप्त होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी यह आवश्यक रूप से सहायक होगा।

संदर्भ

[1]. तिलक, सर्वमान्य बाल गंगाधर, गीता रहस्य (कर्मयोगशास्त्र), 2016, जेड एक्स पब्लिकेशन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृ.5-6.

[2]. प्रसाद, इन्द्र मोहन, 'श्रीमद् भगवद गीता में भक्ति योग दर्शन', 2000, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, करमपुरा, नई दिल्ली, पृ.8.

[3]. निगम, डॉ. ब्रजबिहारी, श्रीमदभगवत् गीता (मदभगवत गीता का जीवन दर्शन) 1994, श्री कावेरी शोध संस्थान, 34 केशव नगर, गोधार, उज्जैन (म.प्र.) पृ.4, 5, 6.

[4]. शास्त्री, दिवाकर, 'गीता का नीति शास्त्र', 2007-2008, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।

[5]. कृष्ण कृपामूर्ति श्रीमद्भगवत गीता (यथारूप), 2014, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम, जुहू, मुम्बई, पृ.63.

[6]. शास्त्री, दिवाकर, 'गीता का नीति शास्त्र', 2007-2008, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, पृ.1-2.

[7]. तिलक, लोकमान्य, श्रीमदभगवत गीता रहस्य, 2016, जेड एक्स पब्लिकेशन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6, पृ.17.

[8]. गांधी, एम.के., गीता माता, 2006, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।

[9]. महर्षि अरविन्द, गीता प्रबन्ध, 1942, हिंदी प्रचार प्रेस, त्याग रामनगर मद्रास, पृ.23.

[10]. https://www.education.gov.in राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार।

[11]. वही।

[12]. वही।